कहानी बंडा भगत की उर्फ अथ कथा ढेलमरवां गोसाई

प्रभात रंजन

उस दिन सारे गांव में हल्ला हो गया। जिधर देखिये उधर यही चर्चा थी गांव के पुराने जमींदार स्व. कामेश्वर सिंह के पोते साजन के सपने में भगत जी आये थे। मुखिया जी के दरवाजे पर साजन बैठा था। गांव के बड़े बुजुर्ग एक एक करके आते जा रहे थे। सबसे पहले उनको ही बताना उचित समझा साजन ने... मुखिया जी ने सबको खबर करने के लिए आदमी भेज दिया। जैसे जैसे लोगों को पता चलता जा रहा था वे आते जा रहे थे। जो सुनता वही भागा भागा आ रहा था।

बात ही ऐसी थी।

मत पूछिए! वही धजा। माथे पर तिलक लगाये, हाथ में लाठी लिए– मुझे तो लगा साक्षात आ गये हैं। कहने लगे अपने गांव में ढेलमरवा गोसाईं का स्थान है। उनको पूजो, चढ़ौना चढ़ाओ। गांव के दक्षिण पाकड़ के पेड़ के पास ढेलमरवा गोसाईं का मंदिर बनाओ। इसी में जितवारपुर का कल्याण ा है। कह कर उन्होंने एतना जोर से ढेला चलाया कि मैं नींद में बिस्तर से गिर पड़ा। अब कह नहीं सकता कि यह चोट बिस्तर से गिरने पर लगी या उनके ढेले से– अपने माथे में निकले गूमड़ को दिखाते हुए साजन वहां उपस्थित लोगों को बता रहा था।

बोलो ढेलमरवा गोसाईं की जय! सरपंच रामबरन मंडल ने उठ कर जयकारा लगाया। चारों दिशाओं में यही आवाज गूंजने लगी– ढेलमरवा गोसाईं की जय! ढेलमरवा गोसाईं की जय! कामेश्वर बाबू के बड़े लड़के यानी साजन के पिता लक्ष्मेश्वर सिंह माहौल की गर्मी को भांपते हुए उठे और मुखिया जी के घर के बाहर उपस्थित भीड़ से मुखातिब होकर बोलने लगे– भगत जी जब तक जीवित रहे गांव के कल्याण के बारे में ही सोचते रहे, जड़ीबूटी से सबका इलाज करते रहे, वह भी बिना किसी स्वार्थ के। अरे ऊ आदमी नहीं देवता थे देवता। हम उनकी इस इच्छा को जरूर पूरा करेंगे। अपने गांव में गोसाईं का ऐसा मंदिर बनेगा जैसा पटना में एक पुलिस अफसर ने महावीर मंदिर का निर्माण करवाया था। आप सब लोगों के सामने इस शुभ काम के लिए आज शुक्लपक्ष एकादशी के दिन मैं. .. मैं... उन्होंने थोड़ा रुक कर भीड़ को देखा, खंखार कर गला साफ किया फिर बोले, पचास हजार अपनी ओर से देने की घोषणा करता हूं।

ढेलमरवा गोसाईं की जय! भीड़ ने उत्साह में फिर जयकारा लगाया।

उसी समय मुखिया जी ने मंदिर निर्माण समिति बनाने की घोषणा भी कर दी। उसके संयोजक बनाये गये बाबू लक्ष्मेश्वर सिंह। आखिर उन्होंने सबसे पहले पचास हजार का चंदा देने की घोषणा जो की थी। प्रसंगवश, उन्होंने चंदा दिया या नहीं इसके बारे में कहानी लिखे जाने तक पता नहीं चल पाया। भरी सभा में मुखिया जी ने मौजूद लोगों से यह विनती भी की– पुण्य के इस काम में दिल खोल कर दान दीजिये। याद रखिये यह मंदिर नहीं अपने गांव की प्रतिष्ठा का स्मारक बनने जा

tadbhav.com home page

रहा है... एक दिन इसी मंदिर से अपने गांव का नाम सारी दुनिया पहचानेगी।

लगातार दूसरी बार चुनाव जीत कर मुखिया बने श्री गिरधारी लाल शर्मा जैसे भविष्यवाणी कर रहे थे आने वाले उस दौर के बारे में जिसके बारे में न किसी ने कभी सोचा था न देखा था।

सब ढेलमरवा गोसाईं की महिमा है, जो भी जितवारपुर आता यही कहता आता यही कहता वापस चला जाता। खैर... यह सब बाद की बातें हैं...

पहले सब कुछ सामान्य था। देश के लाखों गांवों की तरह नेपाल की सीमा पर बसे इस छोटे से गांव जितवारपुर को भी कोई नहीं जानता था। देश के विकास की जो तस्वीर पेश की जाती उसमें लाखों गांवों की तरह इस गांव का भी कोई जिक्र नहीं होता था।

इस सबकी शुरुआत भगत जी की दुर्घटनावश हुई मृत्यु से हुई। रामचरण दास उर्फ बंडा भगत उर्फ भगत जी की मृत्यु के बाद उनको गुजरे अभी तीन महीने भी नहीं हुए थे कि जितवारपुर में कुछ कुछ ऐसा होने लगा जिसके बाद वहां लोग जहां भी जुटते आपस में बात बात में यही कहते सचमुच चमत्कार हो गया। वह भी ठीक उसी स्थान पर जहां एक दिन सवेरे सवेरे नदी की ओर दिशा मैदान करने जाने वालों ने, भैंस चराने वालों ने रामचरण जी... मेरा मतलब है भगतजी को औंधे मुँह पड़े देखा था। सड़क के किनारे पाकड़ के पेड़ के पास।

पास में ही लखनदेई नदी के किनारे छोटा सा गांव है रामपुर परोरी। उसी गांव के रघुनाथ राय का लड़का जगन्नाथ साइकिल से जा रहा था इंटर का रिजल्ट देखने। आसपास के पांच कोस में जितवारपुर ही एक गांव है जहां पक्की सड़क बनी जो जितवारपुर को एक ओर शहर से जोड़ती थी दूसरी ओर नेपाल से। इसलिए शहर जाने के लिए आसपास के गांवों के लोग भी वही रास्ता पकड़ते थे। चोरी छिपे नेपाल माल ले जाने वाले या वहां से माल लाने वाले भी रात के अंधेरे में वही रास्ता पकड़ते। जगन्नाथ ने भी वही रास्ता पकड़ा। पिछली बार फेल हो गया था, इसीलिए इस बार हनुमान भक्त जगन्नाथ मंगलवार को रिजल्ट देखने जा रहा था। उम्मीद अपने से कम हनुमान जी से ज्यादा थी। नदी पार करके जब वह साइकिल से जितवारपुर के दक्षिणी छोर पर सड़क के किनारे खड़े उस पुराने पाकड़ के पेड़ के नीचे से गुजर रहा था कि ठीक पीछे से मिट्‌टी का एक ढेला आकर सिर पर लगा। वह तो गर्मी से बचने के लिए गमछे का मुंड़ेठा बांध रखा था इसलिए चोट अधिक नहीं आयी।

नहीं तो ढेला इतनी तेज गति से आया था कि माथा दो फांक हो गया होता— बाद में उसने गांव के लोगों को बताया।

पहले उसे लगा कोई भैंस चरवाह बदमाशी कर रहा है। नदी के किनारे दोपहर के समय आसपास के कई गांवों के भैंस चरवाहे नदी में भैंस को बोहियाने, नहीं समझे, नहलाने आते थे। भैंसों को पानी में छोड़ कर वे या तो वहीं नदी किनारे कुश्ती खेलते या आसपास आम लीची के बागानों में डोला पाती। उसको लगा डोला पाती खेलते चरवाहों में से किसी ने उसके साथ चउल किया है, खिलवाड़ी की है। साइकिल से उतर कर जब उसने इधर उधर देखा तो सिवाय दोपहर के सन्नाटे के दूर दूर तक कुछ और दिखायी नहीं दे रहा था। ध्यान आया रास्ते में नदी पार करते समय भी उसे भैंसें नहीं दिखायी दी थीं। हो सकता है एकाध रही हों पर उसकी नजर जल्दी जल्दी नदी पार करने के चक्कर में उनके ऊपर न पड़ी हो। उसे कुछ भय हो आया। साइकिल से उतर कर उसने वहीं आंखें मूंदीं और हनुमान चालीसा का एक सांस में पाठ कर लिया। अदृश्य भगवान को प्रणाम किया और बिना पीछे देखे तेजी से पैडिल मारने लगा।

अगले मंगलवार सवेरे जब वह उस पेड़ के नीचे सिन्दूर से पूज कर चढ़ौना चढ़ाने लगा तो आसपास गुजरते लोग कौतूहलवश खड़े हो गये। उनको कथावाचक की तरह जगन्नाथ ने जो बताया उसकी उसी दिन नहीं कई दिनों तक चर्चा होती रही।

सब कहते चमत्कार ही हो गया...

पिछले मंगलवार को जब इस पेड़ के नीचे मेरे सिर में ढेला लगा था उसके बाद तो समझिए चमत्कार ही हो गया। आप लोगों को क्या बताऊं, तैयारी पूरी होने के बावजूद इस बार भी इण्टर की परीक्षा में अंग्रेजी के पेपर में 20 नम्बर का कोश्चन छूट गया था, पास होने का कोई उम्मीद फिर नहीं लग रहा था। लेकिन ढेला लगने के बाद जब मैं आंखें मूंदे जाप कर रहा था तो ऐसे लगा जैसे नाटे कद की एक छाया है जो मुझसे कह रही है कि जल्दी से जाओ फल तुम्हारी प्रतीक्षा में है। साइकिल से जब भागता हुआ मैं कॉलेज पहुंचा तो जैसे चमत्कार ही हो गया। मैं पास ही नहीं हुआ, सेकेण्ड डिवीजन से पास हुआ। तभी मैंने सोच लिया था यहां आकर 21 रुपए का पेड़ा चढ़ौना में चढ़ाऊंगा। कल ही महावीर स्थान के किशोरी साह से पेड़ा ले आया था। हो न हो ई ढेलमरवा गोसाईं का स्थान है, वहां खड़े लोगों को उसने प्रसाद देते हुए कहा। मुझे याद है दादी कहानी सुनाती थीं– कह कर जगन्नाथ ने कंधे से गमछा उतारा मुंड़ेठा बांधा और अपनी हीरो रॉयल साइकिल पर सवार हो गया।

गांव के लोग चमत्कार की उस कथा को लेकर दो वर्गों में बंट गये– काशी साव की चाय नाश्ते की दुकान पर जुटने वाला एक वर्ग जगन्नाथ की कथा में आये नाटे कद की छाया के कारण ा उसे रामचरण जी उर्फ बंडा भगत उर्फ भगत जी की काया से जोड़ता। काशी तो खुलेआम अपना फैसला सुनाता था– अरे और कोई नहीं अपने भगत जी हैं। जिन्दगी भर बंडा बने रहे। ढेला की तरह गुड्डक गुड्डक कर जड़ीबूटी पहचानते रहे। देखिये मर गये तो अब ढेला फेंक फेंक कर सबको आशीर्वाद दे रहे हैं। जीवन में कब किसका बुरा चाहा था जो अब चाहेंगे। भूल गये! आखिर उसी जगह पर उस दिन सवेरे गांव के भैंस चरवाहों ने उनकी लहास देखी थी।

दूसरा वर्ग जगन्नाथ की चमत्कार कथा में आये ढेलमरवा गोसाईं की कथा की याद दिलाता था। गांव के बूढ़ पुरनिया मिलते बैठते तो उस कहानी को याद करते जिसमें ढेलमरवा गोसाईं होते थे जो ढेले का ही चढ़ावा लेते थे, ढेले मारे जाने पर खुश होते और उनके स्थान पर जाने वाले ढेले का ही प्रसाद ले जाते थे। इस भूली हुई कहानी को याद करते हुए मनोरंजन बाबू कहते, किस्सा कहानी में कोनो झूठ थोड़े होता है, देखिये आखिर इतने दिन बाद अपने गांव में ही ढेलमरवा गोसाईं का स्थान निकला जिनके महातम की कथा हम बचपन से ही सुनते आये थे!

उस दिन के बाद से तो अक्सर कुछ न कुछ ऐसा हो जाता कि लोगों को फिर फिर कहना पड़ता चमत्कार हो गया।

एक दिन तो गजब ही हो गया। सवेरे सवेरे जितवारपुर वालों ने देखा पाकड़ के पेड़ के नीचे उसी स्थान पर एक आदमी औंधे मुंह लेटा है। उसके आसपास सामान बिखरा पड़ा है। शायद अलग से बताने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए कि उसके आसपास बड़े बड़े ढेले भी बिखरे हुए थे– ऐसा लग रहा था कि किसी ने ढेलों से उसे इतना मारा कि वह बेहोश हुआ पड़ा है। थोड़ी देर में उसका रहस्य भी खुल गया। गांव में हल्ला हुआ कि रात में पुरवारी टोले में लक्ष्मेश्वर सिंह के घर चोरी हो गयी। जब उनके परिवार के लोगों ने वहां आकर देखा तो सामान पहचान गये और आगे की कहानी के सूत्र गांव वालों ने जोड़ लिये।

लक्ष्मेश्वर सिंह के बेटे साजन ने खुद बताया कि बाकी सब सामान तो है बस गहनों की एक पोटली नहीं मिल रही है। इससे एक कहानी तो यह बनी कि जब वह चोर भाग रहा होगा तो किसी ने उसको घेर लिया होगा। पिटाई करने के बाद जब सामान टटोला होगा तो गहनों की उस पोटली के अलावा कुछ भी काम का नहीं लगा होगा। जो वह अज्ञात लेके चला गया। वैसे, गांव के बाबूसाहबों का पुराना हज्जाम केवल ठाकुर चटखारे ले लेकर और ही कहानी सुनाता– अरे, इस चोर ने एक काम तो अच्छा किया इन हवेली वालों के घर की असलियत हमारे सामने उघाड़ दी। गहने वाली बात तो बाबूसाहेब इसलिए कर रहे हैं ताकि उनके बाप दादों के नाम का थोड़ा बहुत रोब तो गांव वालों पर बना रहे। इनके पास टुटही हवेली के अलावा बच क्या गया है! जो बचाखुचा था ढेलमरवा गोसाईं की

tadbhav.com home page

कृपा से बच गया नहीं तो कुछ भी नहीं बचने वाला था।

वैसे केवल ठाकुर की इस चुटकी में कितनी सच्चाई थी, सच्चाई थी भी या नहीं यह तो भगवान जाने या ढेलमरवा गोसाईं लेकिन एक बात तो सच थी ही कि जितवारपुर गांव में कभी जमींदार समझे जाने वाले बाबूसाहबों के पास अपने पुरखों के नाम, पुराने किस्सों के अलावा खंडहर होती जाती हवेली ही बच सकी थी। कई तो खेत बेचबाच कर शहरों में जा बसे थे। कुछ ही परिवार थे जो अब भी यहीं रह रहे थे। पुराने जमींदार कामेश्वर सिंह का परिवार भी उन्हीं में से एक था। उनके गुजरने के बाद उनका लड़का लक्ष्मेश्वर सिंह और पोता साजन सिंह रह गये थे।

बहरहाल, उस दिन जब साजन ने अपनी स्वप्न कथा सुनाई तो शायद ही कोई ऐसा रहा हो उस गांव में जिसके मन में ढेलमरवा गोसाईं की कहानी को लेकर किसी प्रकार का शुबहा रह गया हो। वैसे उसी दिन हरिजन टोले के फेकु दास ने शाम को काशी साव की दुकान पर जुटी मंडली के सामने कुछ बुदबुदाते हुए अंदाज में कहा था– कामेश्वर सिंह के परिवार ने पहले तो जीते जी भगत जी को ढेलमरवा बना दिया। मर गये तो अब ढेलमरवा गोसाईं बनाने पर तुले हैं। लेकिन फेकु के भंगेड़ी होने की ख्याति ऐसी थी कि उसकी किसी बात को गांव वालों ने न तो कभी गम्भीरता से लिया था न इस बार लिया।

पुरानी कहानियां सुनाने वाले कहते कामेश्वर सिंह के पोते साजन और भगत जी के भाग्योदय का समय कुछ आसपास का ही था। राजमजदूर सुन्नर दास के लड़के रामचरण दास ने कब सोचा था कि एक दिन ऐसा आयेगा उसकी जिन्दगी में कि वह जिले के मालिक यानी कलेक्टर साहब का खास अर्दली बन जायेगा। कहां तो बरसों से समाहरणालय में अलग अलग विभागों में चपरासी के रूप में गुडुक रहा था। इतने सालों बाद भाग्य खुला भी तो ऐसा कि डी.एम. साहब का खास अर्दली बन गया। कल तक जिले के हजारों चतुर्थवर्गीय कर्मचारियों की तरह गुमनाम रामचरण दास एक दिन ऐसे प्रसिद्ध हुआ कि जिले भर के लोग उसको न केवल पहचानने लगे रामचरण जी कह कर बुलाने भी लगे। गांव में भी उसको रमचरणा कहने वाले अपने टोले में भी कम होते गये। उन्हीं दिनों उनका नाम भगत जी प्रकाश में आया। बंडा भगत नाम की चर्चा तो उसके बाद शायद ही सुनायी दी हो...

भगत जी के नाम से बड़ी पुरानी एक कहानी याद आ रही है। याद आ रही है तो क्या पता उसका कुछ गहरा सम्बंध अपनी कहानी वाले भगत जी से जुड़ती हो। क्या पता! आजकल तो विद्वान कहने लगे हैं हर चीज हर किसी दूसरी चीज से जुड़ी होती है...

कई बरस हो गये पास के ही पुरनहिया मठ में न जाने कहां से एक नौजवान आ गया। न नाम का पता न गाम का। पहले लोगों को संदेह हुआ। कहीं चोरी डाका डाल कर तो नहीं आ गया है, किसी का खून करके तो नहीं भागा है? लेकिन जल्दी ही गांव में ही नहीं आसपास के इलाके में भी उनकी ख्याति भगत जी के रूप में बढ़ने लगी। डॉक्टरअस्पतालविहीन इलाके में रहने वालों की हर बीमारी का उनके पास इलाज होता था किसी न किसी जड़ी के रूप में। तब आयुर्वेद इलाज पद्धति का प्रचलन उतना नहीं हुआ था न ही लोग उसकी विद्याओं से खास परिचित थे। इसलिए जड़ीबूटी से इलाज करने वालों को बड़ी ऊंची निगाह से देखा जाता था। उस नौजवान भगत जी बड़ी महिमा हो गयी थी उस इलाके में। लेकिन जड़ी वाले भगत जी अधिक दिन तक वहां टिके नहीं। वे जिस तरह बिना बताये अचानक आ गये थे उसी तरह बिना बताये एक दिन सवेरे उठ कर दिशा मैदान के लिए ऐसे निकले कि फिर उस गांव उस मठ में कभी नहीं लौटे जहां वे दो वर्ष से भी अधिक समय से रहते आ रहे थे। पीछे छोड़ गये ढेरों कहानियां। देखिये आज इतने बरसों बाद मैं भी उनको याद कर रहा हूं...

अगर रामचरण जी का नामकरण भगत जी हुआ तो उसका कारण गांव वालों की स्मृतियों में बची उस गुमनाम भगत की छवि थी जिसके पास हर बीमारी के लिए कोई न कोई जड़ी होती थी।

रामचरण जी भी दिन भर समाहरणालय में नौकरी करते बाकी समय जड़ीबूटी में उलझे रहते। किसी को असाध्य घाव हो जाये अंकोए का दूध लगा देते और घाव ऐसे छूट जाता जैसे किसी ने जादू कर दिया हो, किसी को पेट में बाई उखड़ जाये तो न जाने किस पेड़ की छाल पीस कर खिला देते। उनके अपने नुस्खे थे, अपनी जड़ीबूटियां थीं। हर बीमारी के लिए उनके पास एक ऐसी जड़ी होती थी जिससे उस बीमारी से छुट्टी मिले न मिले आराम मिल जाता था। जिन लोगों के पास शहर जाकर डॉक्टर से दिखा कर अंग्रेजी दवाई लेने के लिए पैसे नहीं होते वे उनकी मुफ्त सेवाओं का लाभ उठा कर संतोष कर लेते। ज्यादातर मरीज उनके अपने टोले के होते जो बदले में उनको दुआएं देते। लम्बी उमर की दुआएं। वे बुढ़ाते जा रहे थे लेकिन अब भी लोग उनको एक से दो होने की दुआएं देते। कहते अब तो एक से दो हो जाओ या बंडा भगत ही बने रहने का इरादा है।

लोग चाहे बंडा भगत बुलायें या भगत जी उनको किसी भी रूप में भगत नाम सुनना अच्छा लगता था। सुन कर वे सचमुच भूल जाते कि उनका जन्म जिस समाज में हुआ था उस जमाने में अपने आपको ऊंचा बताने के लिए कुछ लोग उस समाज के लोगों के हाथ का छुआ पानी भी नहीं पीते थे। गांव में कुछ पुरनिया तो कानाफूसी में यह भी कहते कि पुरनहिया मठ वाले भगत जी ने ही इसको जाते जाते अपनी विद्या का सत्त दे दिया था। वे आपसी बातचीत में एक दूसरे को यह याद दिलाना नहीं भूलते थे कि जिन दिनों वह भगत आया था उन दिनों डेली वेज पर रामचरण पुरनहिया हाईस्कूल में ही काम कर रहा था। उनका तो कहना था कि रामचरण की भगत जी के साथ खूब छनने लगी थी। इसलिए जाते जाते उसने जड़ीबूटियों की कुछ पहचान इनको भी करवा दी। वैसे इस बात का कोई आधार नहीं था न ही उनकी जड़ीबूटियों के उतने अचूक होने की ख्याति थी। इसीलिए इस तरह की चर्चा कानाफूसी के चरण से आगे नहीं बढ़ पायी। इतना संयोग जरूर था कि पुरनहिया वाले भगत जी के जाने के बाद ही रामचरण दास नाम के उस चतुर्थवर्गीय कर्मचारी ने जड़ीबूटी देकर लोगों का इलाज करना आरम्भ किया और धीरे धीरे भगत जी के नाम से बुलाया जाने लगा।

बड़ा अच्छा लगता था। रात में जब अकेले होते तो खुद को धीरे से भगत जी कह कर बुलाते यह देखने के लिए कि यह नाम सुनना अपने आपको कैसा लगता है। मन प्रसन्न हो जाता था इस सम्बोधन को सुन कर। इसी खुशी में दिनभर की थकान, साहब लोगों की डांट सब भूल जाते थे और उनको नींद आ जाती। भगत जी! लोग कहते जड़ीबूटी के इस चक्कर से क्या मिला। पिता की मृत्यु के बाद जड़ीबूटी के चक्कर में ऐसा ओझराये कि एक से दो होने का ख्याल ही नहीं आया। इसीलिए तो लोग पीठ पीछे जिले के डी.एम. साहब के अर्दली होने से पहले तक उनको बंडा भगत भी कह कर बुलाते थे। वैसे कभी कभी अकेले में उनका मन भी होता था जब रात को डी.एम. कोठी से अपनी ड्यूटी पूरी करके लौटें तो कोई घर में हो जो उनसे कहे भगत जी आ गये! लेकिन वे जानते थे कि इन सब चीजों की उम्र अब बीतती जा रही थी। जब कोई इस प्रसंग को छेड़ता तो कहते बचपन में ही जड़ीबूटी से बियाह कर लिया था। इतने साल से इसमें लगे हैं मगर अभी भी कितनी कम जड़ियों की पहचान कर पाये हैं। दुनिया में इतने रोग हैं और उनको ठीक करने वाली इतनी जड़ीबूटियां! लेकिन अभी सारी बूटियों को वे कहां पहचान पाते हैं। अब तो इसी में उनको खुशी मिलती थी कि कोई भगत जी कह कर उनके इस काम को सम्मान दे जो चतुर्थवर्गीय कर्मचारी के रूप में उनको प्राप्त नहीं था।

कहते हैं न इन्सान जो सोचता है जो चाहता है वह कम ही हो पाता है। अक्सर उसके जीवन में वह हो जाता है जिसके बारे में उसने सोचा भी नहीं होता है। दलित कही जाने वाली एक जाति में पैदा होने वाले रामचरण दास ने कब सोचा होगा कि एक दिन बड़े बड़े महात्माओं की तरह उनको भी लोग सचमुच भगत जी बुलाने लगेंगे। जड़ीबूटियों से उपचार करते करते उम्र बीतती जा रही थी। उनकी इस विद्या से लाभ तो सब उठाते थे लेकिन कोई उनको अधिक गम्भीरता से नहीं लेता था। उनसे इलाज करवाने वालों के मन में इस बात का अफसोस बना रहता था कि पैसे के अभाव में

tadbhav.com home page

वे अंग्रेजी इलाज नहीं करवा पा रहे हैं। जिनका यह अभाव दूर हो जाता वे फिर शहर के अस्पतालों डॉक्टरों का ही रुख करते थे। आयुर्वेद चिकित्सा को लोग जानने तो लगे थे लेकिन उसकी लोकप्रियता का वह दौर अभी नहीं शुरू नहीं हुआ था जैसा आज है।

कहते हैं न भगवान जिसको देता है छप्पर फाड़ कर देता है। रामचरण दास, चतुर्थवर्गीय कर्मचारी, सीतामढ़ी समाहरणालय के साथ यही हुआ। कम से कम उन दिनों उसके जानने वाले जो कहानी सुनाते थे उसके अनुसार तो ऐसा ही हुआ। इस किस्से का इतना आधार जरूर है कि उन दिनों उनकी ड्यूटी नये नये पदस्थापित डी.एम. साहब की कोठी को ठीकठाक करने साफ सफाई करने में लगायी गयी थी। एक दिन कुछ ऐसा हुआ कि सब कहने लगे आलोक रंजन प्रसाद जिले में डी.एम. बन कर क्या आये बंडा भगत की किस्मत ही बदल गयी। सैकड़ों चतुर्थवर्गीय कर्मचारियों में से जब रामचरण दास का चुनाव उन्होंने अपने अर्दली के रूप में किया तो गांव में भी लोग कहने लगे रमचरण ाा का भाग खुल गया। अनेक जलने वाले तो यह भी कहते डी.एम. ने अपने जात भाई को अर्दली बनाया तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है।

ऐसे लोग कहां नहीं होते जिनको हर घटना के पीछे कोई न कोई कहानी दिखायी देती है। रामचरण दास के डी.एम. के खास अर्दली बनने के पीछे की कहानी भी बताने वाले कुछ और ही बताते। कहानी सच हो झूठ हो या कहानी की तरह केवल कहानी लेकिन जीवन के उस दौर में भगत जी कहाने की उनकी साध अगर पूरी होती दिखायी देने लगी तो उसमें काफी कुछ हाथ इस कहानी का भी था। कहने वाले कहते कि असल में जड़ीबूटियों के इस ज्ञान ने ही उनको जिलाधिकारी महोदय के इतने करीब ला दिया। कहानी सुनाने वाले बताते कि उस नौजवान जिलाधिकारी ने परीक्षा की तैयारी के दौरान रात रात भर जाग कर इतनी पढ़ाई की थी कि उनको अनिद्रा का रोग हो गया था। रात रात भर नींद नहीं आती थी। कहते हैं नींद की कई गोलियां खाते तब जाकर किसी तरह दो तीन घंटे की नींद आती। बड़े बड़े डॉक्टर वैद्य सब फेल हो गये।

घर की साफ सफाई के दौरान वे अक्सर देखते कलेक्टर साहब किसी डॉक्टर से इस बीमारी के बारे में पूछ रहे हैं या उनके ऑफिस में आया उनका कोई जानकार उनको किसी ऐसे वैद्य का पता दे रहा होता या होम्योपैथी के किसी ऐसे डॉक्टर के बारे में बता रहा होता जिसके पास हर असाध्य बीमारी का इलाज होता था। उन्होंने इस बात को अच्छी तरह समझ लिया कि साहब के लिए यह बीमारी बड़ी परेशानी बन चुकी है। एक दिन उसने हिम्मत करके साहब से कहा कि उसकी गुस्ताखी को क्षमा करें तो वह उनसे कुछ अर्ज करना चाहता है। साहब के गर्दन हिलाने पर उसने न जाने कौन सी जड़ी देते हुए कहा कि अगर केवल चार खुराक इसकी खा लें बीमारी फिर भी दूर नहीं हुई तो वह इस नौकरी को छोड़ कर खुद ही चला जायेगा।

साहब पर उसकी बातों का असर हुआ और दवा का भी। इस घटना ने उनकी अर्दली के रू प में प्रोन्नति ही नहीं करवायी भगत जी के रूप में उनकी ख्याति भी फैल गयी। एक ऐसे भगत जी के रूप में जिसकी जड़ी खाकर जिले के कलेक्टर की असाध्य बीमारी भी ठीक हो गयी। कहानी में सचाई थी या नहीं इसका कोई आधार तो नहीं मिला लेकिन इतना सच जरूर था कि एक दिन कलेक्टर साहब ने उसको अचानक अर्दली बना लिया। वह भी अपने साथ साथ गाड़ी में चलने वाला अर्दली।

डी.एम. साहब के अर्दली बनने के बाद उनका जीवन बदलने लगा। अब वे जितवारपुर के रामचरण दास नहीं रह गये थे जिसको कोई रमचरणा बुलाता, पीठ पीछे जिसे लोग बंडा भगत बुलाते। अचानक उनका उठना बैठना जिले के बड़े बड़े लोगों के दरवाजे पर होने लगा। साहब जहां भी जाते वह भी उनके साथ होते। गांव देहात के बड़े बड़े लोगों के दरवाजे पर उनका भी आदर सत्कार होता। बढ़िया खाने को मिलता। उनका जीवन बदलने लगा था। वे पहले वाले रामचरण नहीं रह गये थे। न अब वे पहले की तरह ऑफिस से लौट कर जड़ीबूटी लेकर बैठते कि कोई आये जिसका इलाज करें

न काशी साव की दुकान पर बैठते जहां अधिक लोगों से बातचीत करनी पड़ती हो। सड़क भी वे सिर झुकाये चलते। उनकी इस गम्भीरता का असर भी दिखायी देने लगा था। उन दिनों जब वे गांव की सड़कों से गुजरते तो लोग उनको नमस्कार करने लगे थे। जिसका जवाब वे अपने साहब की तरह सिर झुकाये झुकाये ही गर्दन हिला कर देने लगे थे। कोई परणाम कहता तो जवाब में गर्दन हिलाते हुए कहते— परणाम! परणाम! और आगे अपनी दिशा में बढ़ जाते।

उन दिनों उनका सबके साथ उठने बैठने का मन भी नहीं करता। उनका मन करता बड़े बड़े लोगों के साथ बैठें। देश समाज की बात करें। लेकिन इसमें एक समस्या यह थी कि गांव में बड़ा कहाने वाले लोग जो थे वे या तो गांव छोड़ चुके थे या उनके घर उनका आना जाना नहीं था। जमाना भी बदल रहा था। जब समाहरणालय में चतुर्थवर्गीय कर्मचारी के रूप में उनका चयन हुआ था तब अपने गांव में अपने समाज के वे पहले ही व्यक्ति थे जिसका चयन सरकारी मुलाजिम के रूप में हुआ। अब तो उनके अपने ही टोले के कम से कम तीन व्यक्ति अधिकारी हो गये थे। उनके जैसे छोटे मोटे मुलाजिम तो कई थे। वे अपने समाज के अपने जैसे मुलाजिमों के साथ उठना बैठना नहीं चाहते थे और अपने समाज के अफसर भी उनके साथ वैसे ही व्यवहार करते थे जैसे दूसरे अफसर। गांव में एक लक्ष्मेश्वर सिंह का दरवाजा ही था जहां पहले भी कभी कभार जाते थे। सामाजिक हैसियत के मुताबिक वही एक बड़े आदमी थे जिनके दरवाजे पर वे बिना बताये जा सकते थे।

अर्दली बनने के बाद एक दिन जब वे बाबू लक्ष्मेश्वर सिंह के दरवाजे पर पहुंच भी गये तो बाबूसाहब आरामकुर्सी डाल कर धूपसिंकाई कर रहे थे। लगता है उनको रामचरण की इस तरक्की का पता चल चुका था। क्योंकि जैसे ही रामचरण उनको यह सूचना देकर जमीन पर बिछी चटाई पर बैठने जा रहा था कि लक्ष्मेश्वर सिंह ने उनको टोक दिया— अरे रामचरण ओने नहीं एने कुर्सी पर बैठिये तो उनको सचमुच अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ।

विश्वास तो मुझे भी नहीं हुआ सुन कर। आखिर इतने बड़े जमींदार कामेश्वर सिंह का लड़का और एक अछोप को, दलित कही जाने वाली जात के आदमी को वह भी अर्दली जैसे मामूली आदमी को अपने दरवाजे पर कुर्सी पर बैठने के लिए कहे।

यही तो बात है। जमाना सचमुच बहुत बदल चुका था। गांव में कामेश्वर सिंह जैसे भूमिहार जमींदारों के किस्से ही किस्से बच गये थे। जमींदारों के परिवार में पट्टीदारी में जिनके बच्चे बाहर पढ़े लिखे उनके बच्चों ने बाहर बसना ही बेहतर समझा और पीछे से उन बच्चों के माता पिता भी वहीं जा बसे दिल्ली, मुम्बई, बंगलौर, हैदराबाद वगैरह वगैरह... गांव की बची खुची जमीन या तो बेच चुके थे या बेचते जा रहे थे। कभी कभार गांव वालों को अपनी याद दिलाने छठ के परब पर आ जाते। पुराने लोगों के साथ बैठ कर पुराने दिनों को याद करते, दो चार दिन खेत खलिहानों में घूमते टहलते। बच्चों की जिद को दोष देते और परब खतम होते ही चले जाते।

पुरवारी टोले के भूमिहार जमींदारों में एक कामेश्वर सिंह का परिवार ही बचा था जिसकी तीसरी पीढ़ी भी गांव में ही रह गयी थी। बाबू कामेश्वर सिंह के इकलौते लड़के लक्ष्मेश्वर सिंह कभी कभार दालान में टंगे उस जमींदारी बांड को देखते जो सरकार की ओर से उनके पिता जी को मिली थी तो उनको इस बात की कसक जरूर होती कि उनका बेटा दिल्ली पढ़ने नहीं जा सका। कुछ तो पिता जी की बीमारी का दिल्ली भेल्लोर में इलाज करवाने में जमीन खिसकी कुछ उनके मरने के बाद बरबरना भोज यानी बारहों वर्ण के लोगों के लिए भोज करने और बची खुची तीन बेटियों की परिवार की प्रतिष्ठा के अनुरूप शादी करने के चक्कर में। उसके बाद एक तो अपने इकलौते बेटे को पढ़ने के लिए दिल्ली भेजने लायक उनकी हैसियत नहीं रह गयी थी और दूसरे अपने चचेरे भाइयों की तरह लड़के को दिल्ली भेज पाने के बारे में सोचने का भी अवसर उनके लड़के साजन ने नहीं दिया। इण्टर में तीन बार फेल होने के बाद उसने आगे परीक्षा देने से ऐसा इन्कार किया कि उन्होंने भी अपने लड़के

tadbhav.com home page

को आगे पढ़ाने के बारे में सोचना छोड़ कर उसके लिए मुफीद रोजगार के बारे में सोचना शुरू कर दिया जिसके सहारे वह अपना आगे का जीवन इज्जत प्रतिष्ठा से काट सके। अपनी तो कट ही चुकी थी चिन्ता बस बेटे की लगी रहती थी।

लेकिन बिना पूंजी के क्या रोजगार करवायें इसका कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। नाते रिश्तेदारों में तो कई थे जो बड़े बड़े शहरों में बड़े बड़े पदों पर काम करते थे लेकिन उनके बारे में उनको खुद कुछ तभी पता चलता था जब कोई दूसरा आकर बताता था। किसी से जब कोई आस हो मदद तभी मांगी जा सकती है। यहां तो उनको यह डर लगा रहता कि अगर गलती से वे किसी रिश्तेदार के यहां पहुंच जायें तो कहीं वह पहचाने ही ना। उससे भी बढ़ कर यह बात भी थी किसी से नौकरी वगैरह में सिफारिश करने के लिए कहते भी तो किस मुंह से– लड़का बी.ए. पास भी नहीं था। पहले वाला जमाना तो था नहीं। आजकल तो बी.ए. कोई भी कर लेता है तो भी उनको नौकरी नहीं मिलती। ऐसे में ग्रेजुएट नहीं होना कितनी बड़ी मुश्किल है इस बात को वे समझते थे। सोचते कोई कलेक्टर के ऑफिस में या सहकारी बैंक में अपना होता तो सरकारी लोन मिल जाता और लड़का कोई रोजगार शुरू कर पाता। बहुत सोचने पर यही एक रास्ता सुझाई पड़ता था उनको– सरकार द्वारा बेरोजगारों को लोन दिये जाने की योजना में सरकारी लोन या सहकारी बैंक से लोन।

लेकिन अपने समाज का न कोई कलेक्टेरिएट में था न ही किसी और सरकारी विभाग में कोई काम करता था कि किसी तरह की पैरवी करके कोई सरकारी लोन दिलवा पाता न ही उनका कोई अजीज बैंक में काम करता था। अपने कहाने वाले अपने समाज के जो भी थे वे तो अब दिल्ली, मुम्बई, हैदराबाद जैसे शहरों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में काम करते जो उनके किसी काम नहीं आ सकते थे। गांव में हरिजनों की बस्ती में कई लोग इधर जरूर सरकारी नौकरियों में आये थे लेकिन उनमें से वे किससे कहने जाते। कभी कभार सुन्नर का बेटा रामचरण दास उनका हालचाल पूछने आ जाता था लेकिन वह किस काम का।

अब इसे महज संयोग कहा जायेगा या कथानक रूढ़ि सुन्नर दास के लड़के के बारे में उन्होंने सोचना शुरू किया और वह उनका हालचाल पूछने आ गया। आकर दूर से ही प्रणाम करने के बाद उसने लक्ष्मेश्वर बाबू को बताया कि उनके आशीर्वाद से कलेक्टर आलोक रंजन प्रसाद ने उनकी बहाली अपने साथ साथ चलने वाले अर्दली के रूप में कर ली है। उसके अंतिम वाक्य में लक्ष्मेश्वर सिंह ने न जाने क्या भांप लिया था कि कुर्सी की तरफ इशारा करते हुए उसे बैठने का इशारा कर दिया। इस वाक्य को सुन कर उनको न जाने कैसा अनुभव हुआ कि सुनने के बाद भी कुछ देर वैसे ही खड़े रह गये। जब बाबू लक्ष्मेश्वर सिंह ने अपना कथन दोहराया तब जाकर उनको पास ही रखी कुर्सी पर बैठने का ध्यान आया। शायद सोचने लगे हों कि इतनी साधारण सी दिखायी देने वाली काठ की इस कुर्सी पर बैठने में उनको कितना समय लग गया शायद पचास वर्ष या कुछ पीढ़ियां...

जवाब में रामचरण ने बड़े लोगों जैसी विनम्रता के साथ कहा कि वह परम्परावादी आदमी है और अपने को आज भी उनके बराबर बैठने के काबिल नहीं समझता जिनके पिता के नाम से आज भी जितवारपुर गांव को याद किया जाता है। जवाब में लक्ष्मेश्वर सिंह ने कहा कि जब जिला के सबसे बड़े हाकिम ने तुमको अपने साथ अपनी गाड़ी में बैठने लायक समझा है तो हम कौन हैं। वैसे भी न अब पहले वाला जमाना है न हमारे खयालात पुराने हैं। उस दिन लक्ष्मेश्वर सिंह के बगल में वे ऐसे बैठे कि उठने बैठने का सिलसिला ही चल पड़ा। उस दिन लक्ष्मेश्वर बाबू काफी देर तक उनसे बातें करते रहे और थाहते भी रहे। जब भगत जी चलने लगे तो कहा जब भी छुट्टी मिले आ जाया करो इतना अकेला पड़ गया हूं, कोई देखने भी नहीं आता। पिता जी ने गांव में इतने लोगों को बसाया कोई खोज खबर भी नहीं लेने आता। एक बस तुम ही हो बेटा जो आ जाते हो। अब इस गांव में कोई अपना ही नहीं बचा। देखते देखते सब पराये हो गये।

रामचरण जी जानते थे कि आज उनके अपने टोले में ही कई ऐसे परिवार हो गये थे जिनकी हैसियत लक्ष्मेश्वर सिंह जैसे जमींदार से अधिक थी। लेकिन दूसरी तरफ यह सच्चाई भी थी कि इतना सब कुछ होने के बाद भी जितवारपुर गांव को लोग उसके पिता कामेश्वर सिंह के नाम से ही पहचानते थे। उस दिन की घटना ने उनको अभिभूत कर दिया या इतने बड़े जमींदार के दरवाजे पर बार बार कुर्सी पर बैठ कर साहबों की तरह चाय पीने का लोभ कह नहीं सकता लेकिन उस दिन के बाद लक्ष्मेश्वर सिंह के दरवाजे पर उनका आना जाना पहले से नियमित हो गया। उन्हें जब भी अपने जिम्मेदारी भरे काम से फुरसत मिलती वह बाबूसाहेब के दरवाजे आ जाते उनसे अपने सुख दुख बांटने। आखिर वह अब बड़े लोगों के साथ उठने बैठने लगे थे। लक्ष्मेश्वर सिंह की आज जैसी भी हालत हो गयी हो लेकिन समाज में कभी बड़े बड़े लोगों के साथ उनके परिवार का उठना बैठना था। बैठक में फ्रेम करवा कर टंगा जमींदारी बांड अपने आपमें सारी कहानी कह देता था।

उधर लक्ष्मेश्वर बाबू से जब उनकी कुछ अंतरंगता बढ़ी तो एक दिन मौका देख कर उन्होंने रामचरण उर्फ भगत जी के सामने अपना दुखड़ा रोना शुरू कर दिया। कहने लगे तुमने अच्छा किया विवाह नहीं किया औलाद से ऐसा दुख तो नहीं भोगना पड़ता। एक बेटा है। तुमसे क्या छिपाना अब अपने समाज में कोई हमारे दरवाजे का रुख भी नहीं करता। घर की हालत कैसी है तुमसे छिपी नहीं है। किसी तरह इज्जत बची हुई है।

रामचरण ने समझा शायद लक्ष्मेश्वर जी पैसे की मांग करेंगे। उसने तत्काल कहा, कोई रोजगार शुरू काहे नहीं करवा देते हैं। कहियेगा तो कुछ पैसे हम भी दे देंगे। ज्यादा तो है नहीं आपको पता है अभी पिछले ही साल सीतामढ़ी वाले रोड पर जमीन खरीदे थे। छप्पर डाल कर एक खपरैल भी बनवाये थे। इस साल तो उसको पक्का भी करवा लिए हैं। हाथ तो टाइट है लेकिन बउआजी अगर कोई दुकान डाल लें नेपाली समान का तो खूब चलेगा। अरे तुम एतना सोचे यही बहुत है। आजकल दोसरा के बारे में कौन सोचता है। समय आयेगा तो तुमसे ही कहेंगे और किससे कहेंगे। लेकिन अभी हम दूसरा बात कह रहे थे– लक्ष्मेश्वर बाबू ने माहौल को थोड़ा और रहस्यमय बनाते हुए कहा।

कौन बात? बताइए बताइए! भगत जी की उत्सुकता बढ़ चुकी थी।

अरे तुमसे क्या कर्जा लें। तुम कलेक्टर साहब के एतना नजदीक रहते हो। तुमको तो पता ही होगा सरकार ने शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार देने के खयाल से स्कीम शुरू किया है। सोच रहे हैं उसी में साजन से अप्लाई करवा दें। कर्जा मिल जाए तो कुछ और पैसा मिला कर मारुति वैन खरीद देंगे। गाड़ी चलवाने में थोड़ा इज्जत प्रतिष्ठा भी है कमाई भी अच्छा है। पढ़ा लिखा तो नहीं लेकिन लोग कहते हैं गाड़ी खूब बढ़िया चलाने लगा है। अपने चलाने में शरमायेगा तो ड्राईवर रख लेगा। आजकल तो कम पैसा में ही ड्राईवर मिल जाता है। घरे घरे लइका लोग ड्राइवरी सीख लिया है। बाकी गाड़ी का अच्छा जानकारी होने से कोई ठग नहीं पायेगा। नहीं तो आजकल ड्राईवर सब ही लूट कर खा जाता है।

ऊ तो आप ठीक कह रहे हैं लेकिन बउआजी तो बी.ए. पास भी नहीं हैं शिक्षित बेरोजगार वाला लोन तो बी.ए. पास लोगों के लिए है... बात काटते हुए भगत जी बोले।

वही तो तुमसे कह रहे थे रामचरण, लक्ष्मेश्वर बाबू ने खंखारते हुए कहा। कलेक्टर से अगर तुम किसी तरह कह कर लोन पास करवा दो तो बड़ी मेहरबानी होगी– कह कर उन्होंने भगत जी के सामने हाथ जोड़ दिये थे। बाद में इस घटना के एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी ने लोगों को बताया। भगत जी के सामने गांव के पुराने जमींदार का वारिस ऐसे हाथ जोड़ कर विनती करे। उस दिन उनको अपने महत्व का पता चला। कहना तो चाहते थे चाहे जो हो जाये ई काम करवा कर ही रहेंगे, आप हाथ जोड़ कर जो बोले हैं। लेकिन बड़े बड़े साहबों की सेवा करते करते सरकारी भाषा का उनको भी अच्छा अभ्यास हो गया था इसलिए उनके मुंह से निकला, काम तो बहुत मुश्किल है लेकिन आप अप्लाई करवा दीजिए

हम मौका देख कर साहब से बोलेंगे। करना न करना तो उनके हाथ में है।

तुम कहके तो देखो। बाकी तो सब भगवान के हाथ में है।

कहा नहीं जा सकता भगवान की कृपा थी या भगत जी की बात का असर। इधर साजन ने अप्लाई किया और दो महीने में लोन पास भी हो गया और पंद्रह दिन में दूरा पर नया मारुति वैन भी आ गया। कहानियां तो तरह तरह की चलीं। कहते हैं कि भगत जी ने एक दिन सुबह जब कलेक्टर साहब को अकेले पाया और उनको गाना गुनगुनाते देख कर यह अनुमान भी लगाया कि साहब का मूड ठीक है तो डरते डरते उसने साहब से साजन के लोन के बारे में कहा। लोग बताते भगत जी ने कलेक्टर के इतने नजदीक रहने के बावजूद उनको न उससे पहले किसी काम के लिए कहा था न उसके बाद ही कहा। कलेक्टर साहब सुन कर कुछ देर तो चुप रहे फिर कहा कल उसको बुला लेना।

लोन मिलने के बाद फेकु दास ने कहा था अरे ई भूमिहार के फेर में पड़ गये हैं भगत जी। जब इनको सोध लेगा तब पता चलेगा। लेकिन उसकी बात पर किसने कब ध्यान दिया था जो तब देते। साजन जरूर लोन मिलने के बाद अकेले में भगत जी को चाचा भी कहने लगा था। उसकी वैन चलने लगी और लक्ष्मेश्वर सिंह के घर में भी थोड़ी बहुत समृद्धि वापस आने लगी। बरसों बाद उनकी उस टुटहा हवेली की मरम्मत भी हुई और पुताई भी। गाड़ी के आने के बाद उनके घर में समृद्धि भी मारुति वैन जैसी तेज गति से आ रही थी। कहने वालों का क्या इसी को लेकर कहानियां बनाने लगे। बीआरएफ 2939 गाड़ी पर सवार साजन सिंह कथानायक बनता जा रहा था उनके लिए। ऐसा कथानायक जो दिन में तो खादी झाड़ कर अपने सफेद वैन में सवार होकर चलता। रास्ते में गुजरने वालों को वैसे ही हाथ उठा कर सलाम करता हुआ जैसे देश के बड़े बड़े नेताओं को करते हुए टीवी पर देखता था।

लोग कहते दिन में तो वह बस ऐसे ही लोगों को दिखाने के लिए गाड़ी चलाता है। इतना शान से ही रहना था तो लोन लेकर गाड़ी क्यों खरीदा? कोई कहता उसकी गाड़ी का असल खेला तो रात में शुरू होता है। असल में तो उसकी गाड़ी रात में सिंडिकेट के लिए काम करती जो इस पार उस पार के व्यापार के लिए जानी जाती। रात होते ही गाड़ी में इस पार से तेल, नमक भर कर जाता जिनकी उन दिनों नेपाल में बड़ी कमी थी। उधर से लौटते तो गाड़ी में गांजा भर कर जिसकी इस तरफ बड़ी मांग थी। सीमा के दोनों ओर रहने वाले लोगों की इसी कमी को पूरा करने के उद्देश्य से सीतामढ़ी रोटरी क्लब द्वारा वर्ष के सर्वश्रेष्ठ उद्यमी के रूप में दो बार सम्मानित महेश सिग्रीवाल ने सिंडिकेट का गठन किया था। अच्छी गाड़ी चलाने वाले और किसी भी परिस्थिति में साहसपूर्ण व्यवहार करने वाले सिंडिकेट के सामूहिक व्यापार का हिस्सा बन सकते थे। लोग कहते साजन सिंडिकेट का सबसे जुनरबी है– न किसी से डरने वाला न किसी की परवाह करने वाला।

तमाम कहानियों की तरह इस कहानी का भी कोई आधार तो नहीं था लेकिन साजन की बातचीत से अक्सर लगता था कि वह इस तरह के काम कर सकता है इसीलिए उससे जुड़ी इस तरह की कहानियों को बल मिलता गया। अपने इण्टर पास न कर पाने की बात वह बड़े गर्व से बताता था। कहता देश विदेश के अनेक बड़े बड़े नेता, अभिनेता इण्टर पास नहीं कर पाये और तो और दुनिया का सबसे अमीर व्यक्ति बिल गेट्स भी इण्टर पास नहीं है। अब बहुत पढ़ने लिखने से कुछ नहीं होता। असली बात यह है कि आपको दुनिया की कितनी समझ है। पैसा का युग है। जिसके पास जितना पैसा है उसी की ठाठ है। कोई नहीं पूछता पैसा कहां से आ रहा है। असल चीज है कि आपके पास पैसा होना चाहिए। गांव के बड़े बूढ़े उसकी बातों से प्रभावित होकर कहते पैसे के बारे में इसकी समझ इतनी साफ है कि एक दिन जरूर खूब पैसा बनायेगा। पिता लक्ष्मेश्वर सिंह को भी लगता था एक दिन उनका लड़का परिवार की खोयी हुई प्रतिष्ठा वापस जरूर लायेगा...

इधर साजन की किस्मत मारुति वैन के सहारे दौड़ रही थी कि उसके मुंहबोले चाचा की

गाड़ी फिर से गुमनामी की पटरी पर चल पड़ी। अचानक आलोक रंजन प्रसाद का तबादला हो गया और उसी के साथ भगत जी की प्रसिद्धि का दौर भी बीत गया और उस सम्मान का भी जो कलेक्टर के खास अर्दली के रूप में उनको प्राप्त था। उनको समझ में आ गया था दुनिया में सब मतलब के लिए यारी करते हैं। जब आपके पास पावर रहता है तो सब सलाम करते हैं पावर खत्म सब खत्म। डी.एम. के अर्दली के रूप में जो पावर उनको मिला था खत्म हो गया। कारण नये कलेक्टर के अर्दली वे नहीं बन पाये। उनका तबादला फिर से किसी गुमनाम विभाग में हो गया और जिले के कई हजार चतुर्थवर्गीय कर्मचारियों की तरह वे भी एक बार फिर पहचानविहीन हो गये।

आसपास की दुनिया से ऐसा विराग उपजा कि अपनी नौकरी का बाकी समय जड़ीबूटियों की खोज में लगाने लगे। इधर जबसे कलेक्टर को जड़ी देने वाली बात फैली थी भगत जी को लोग गम्भीरता से लेने लगे थे। पहले उनकी इस विद्या का लाभ केवल कुछ गरीब वगैरह ही उठा पाते थे। लेकिन पिछले वर्षों में जबसे जड़ीबूटियों की यह विद्या आयुर्वेद के रूप में पुनर्जीवित होने लगी थी पढ़े लिखे लोगों की दिलचस्पी भी इसमें बढ़ी थी।

ऐसे लोग भी भगत जी से असाध्य बीमारियों की जड़ी जानने आते तो उनको लगे हाथ यह सलाह भी दे देते उनको अपनी जड़ीबूटियों वाली दवाओं को तैयार करके बाजार में बेचना चाहिए। उनमें से कई उनको किस्से सुनाते कि किस तरह हजारों कम्पनियां देश में ऐसी दवाएं बना कर बेच रही हैं। इनकी मांग लगातार बढ़ती जा रही है। वे उनको सलाह देते कि जिस तरह की जड़ी बूटियां वे देते हैं ऐसी कोई नहीं देता, शर्तिया उनका नुस्खा लोकप्रिय होगा।

ऐसा नहीं था कि भगत जी से सबने मुंह फेर लिया हो। उनको चाचा कहने वाले साजन ने उनसे उसी तरह सम्बंध बनाये रखा। उसके पिता लक्ष्मेश्वर सिंह से मिलने जाते भगत जी तो साजन भी उनके पास बैठ जाता। रास्ते में कहीं पैदल आता देखता और अगर वह गाड़ी से होता तो गाड़ी रोक कर साजन भगत जी को भी बिठा लेता। साजन के बारे में कहा जाता कि वह पैसे कमाने का कोई भी नुस्खा हाथ से नहीं जाने देता। उसके दिमाग में भी भगत जी के आयुर्वेदिक नुस्खों को लेकर कुछ न कुछ चल रहा होगा क्योंकि उसने भी अपने मुंहबोले चाचा को अकेले में यह सलाह देना शुरू कर दिया था आपके पास ई जो जड़ीबूटी का ज्ञान है न समझिए अनमोल रतन है। आप आज तक अपने जड़ी का भेद किसी को नहीं देते हैं लेकिन जानते हैं इसको बांटियेगा तो समाज का केतना भला होगा। ई कभी सोचे हैं। अरे हमरा मानिए तो अपना सारा जड़ी के बारे में नुस्खा के साथ लिख दीजिये। हम किताब छपवा देंगे। आपको तो साले साल पैसा मिलेगा ही किताब की बिक्री होगी तो समझिए जो पढ़ेगा उसी का भला होगा। साजन सिंह अकेले में अक्सर उनके कान में यह सलाह डाल देता और वह मौन सोचते रह जाते। भगत जी भले मौन रह जाते हों लेकिन भतीजे ने अपनी तरफ से कहना नहीं छोड़ा।

पैसे कमाने के नये नये तरीकों पर नजर रखने वाला साजन अच्छी तरह जानता था कि जड़ीबूटी की इस विद्या पर आधारित आयुर्वेदिक दवाइयों का कारोबार कितना फल फूल रहा है। देश विदेश में इसकी कितनी मांग है। वह खुद अपनी गाड़ी से नेपाल में मिलने वाली एक दुर्लभ जड़ी की खेप चोरी छिपे एक मल्टीनेशनल कही जाने वाली कम्पनी के लिए लाता था जो ताकत की दवा बनाने के लिए उसका इस्तेमाल करती थी। चोरी छिपे और बड़ी सफाई से उनका काम करने के कारण कम्पनी के बड़े लोगों से उसका अच्छा परिचय था। उनसे वह आयुर्वेद के बारे में पूछता समझता रहता था।

भतीजे ने चाचा को इस तरह से घेरा कि अंत में वह अपनी गुप्त जड़ियों और उनके नुस्खों के बारे में साजन को लिखाने के लिए तैयार हो गये। एक शर्त पर कि जब किताब छपे तो उसकी कीमत इतनी कम हो कि गरीब आदमी भी उसे अपनी कमाई से खरीद सके। सीतामढ़ी में अपने गाड़ी के काम के लिए जो अपना ऑफिस साजन ने बना रखा था उसी में चाचा भतीजा मंडली बैठने

tadbhav.com home page

लगी। ऑफिस से छूटते ही वे साजन के ऑफिस आ जाते अगर साजन फुर्सत में होता तो किताब लिखवाना शुरू कर देते। कहते मेरा तो आगे नाथ न पीछे पगहा लेकिन यह किताब रहेगी तो लोग इसी से याद रखेंगे। कभी पूछते किताब में फोटो भी छपेगा? जब साजन जवाब में हां कहता तो फिर पूछते फोटो रंगीन छपेगा या ब्लैक एंड व्हाइट। साजन कहता प्रकाशन कम्पनी की तरफ से फोटो खींचने वाले आयेंगे। विदेशी कैमरा से फोटो खींचेंगे। सुनसुन कर मन ही मन खुश होते और अपने सारे नुस्खे लिखवाते जाते।

इधर किताब पूरी हो रही थी उधर एक और प्रसंग इस बीच बार बार उभर रहा था। मुंहबोले चाचा ने भतीजे के लोन के लिए जब डी.एम. साहब से कहा तब आप लोगों को याद होगा कि डी.एम. ने कहा था कल बुला लेना। अगले दिन जब साजन को लेकर वह पहुंचा तो डी.एम. ने कहा कि एक जिम्मेदार गारंटर ले आओ अभी के अभी लोन दिलवा देते हैं। साजन ने छूटते ही कहा चाचा जी यहां हैं ही किसी और को ढूंढने जाऊंगा और समय लग जायेगा। भतीजे के मुंहबोले चाचा ने जो भरोसा उस दिन उसके ऊपर दिखाया था वही अब इस बुढ़ापे में उन पर भारी पड़ता जा रहा था। कारण तो आप समझ ही गये होंगे। जी, साजन ने लोन नहीं चुकाया।

पहले भी तकाजे साजन के पास आते रहे खुद भगत जी ने भी कई बार उससे कहा। वह टाल जाता। कभी कहता किस्त ही तो नहीं चुका रहा हूं। एक बार में ही सारा दे दूंगा। लेकिन नये डी.एम. ने सारे पुराने कर्ज की उगाही के उद्देश्य से यह आदेश जारी कर दिया लोन अगर कर्जदार न वापस करे तो उसके गारंटर से वसूला जाये। लोग भी ऑफिस में उसे समझाते कि अब तो ऐसा कानून बन गया है कि अगर लोन नहीं चुकाये तो सरकार गारंटर से पूरा वसूलती है, उसे भी जेल जाना पड़ता है। कोई बताता कि अगर गारंटर सरकारी नौकरी में हो तो सरकार उसकी पेन्शन वगैरह भी रोक लेती है। वह परेशान था। कई बार साजन से उसने कहा भी था। गुस्से में किताब का काम भी बीच में छोड़ दिया था। उनको भरोसा था कि साजन उनके साथ धोखा नहीं करेगा। इस तरह उस पर दबाव बनायेंगे तो जल्दी ही सरकार का कर्जा लौटा देगा।

किताब का काम छोड़ दिया तो साजन से मिलना भी बंद हो गया। लेकिन उनको भरोसा था अपने ईश्वर पर, भगत बन कर इतने दिनों से गरीबों की सेवा कर रहे थे। उनके साथ तो भगवान बुरा नहीं ही होने देंगे। विश्वास तो था लेकिन चारों ओर लोग तरह तरह की बातें कर रहे थे। जमाना कितना बदल गया था इस बात को वे नहीं समझ पाये। वे नहीं समझ पाये कि ऐसा समय आ चुका है कि कोई भी पैसे के लिए कुछ भी कर सकता है। कौन कब दगा दे जाये कहा नहीं जा सकता। किसके मन में चोर बसा हो कहा नहीं जा सकता।

जिन दिनों सरकारी लोन वाला प्रकरण गांव में चर्चा का विषय बना हुआ था और किसी मनचले का बनाया यह तुक्तक आपसी बातचीत में दोहराया जा रहा था– *हम कहनी चरना साले से, मत कर यारी भूमिहारे से...* उन्हीं दिनों भगत जी को इस बात का पहला संकेत मिला– शायद साजन वैसा नहीं है जैसा वे समझते आये थे। इसका पहला संकेत उनको अपने एक मरीज के माध्यम से मिला। पहले मैंने बताया था कि जबसे आयुर्वेद का प्रचलन बढ़ा था भारत नेपाल के आसपास के शहरों के कुछ लोग भी उनसे कब्ज, बवासीर आदि की जड़ी लेने आते रहते। ऐसे ही उनके एक मुरीद थे सीतामढ़ी के कोर्ट बाजार स्थित सेंट्रल बैंक में कैशियर रघुनाथ राज। उन्होंने एक दिन बताया जैसी जड़ी बूटी की दवा वे देते हैं वैसी ही दवा पिछले सप्ताह जब वे दिल्ली गये थे तो देखा आयुर्वेदिक दवाओं की दुकान में बिक रही थी। किसी मल्टीनेशनल कम्पनी की बनायी हुई थी– हर्बल इंटरनेशनल नाम था कम्पनी का। मैंने ली नहीं उससे अच्छी दवा तो आपकी होती ही है। ये विदेशी कम्पनियां कुछ नहीं कर रही हैं देशी नुस्खों पर अपना लेबल चिपका कर महंगे दामों में बेच रही हैं। बस आगे की बातचीत पर उनका ध्यान नहीं टिका। उनके ध्यान में तो एक ही नाम अटक गया– हर्बल इंटरनेशनल।

tadbhav.com home page

उनको याद आया अक्सर बातचीत में साजन इसी कम्पनी का नाम लेता था। एक बार उसने बताया भी था कि नेपाल से वह इस कम्पनी के लिए एक दुर्लभ जड़ी अपनी गाड़ी में लेकर आता है। उसने भगत जी को बताया था कि वह उस कम्पनी के कुछ बड़े अफसरों को जानता है। वह उनको भी नुस्खा दिखायेगा भगत जी का। अगर वे तैयार हो गये तो उनकी दवाएं दुनिया भर में बिकेंगी और और उनको मुनाफे में हिस्सा भी मिलेगा... तो क्या...

रात तो नहीं हुई थी शाम का अंधेरा गहरा गया था। आमतौर पर यह समय शहर गये लोगों के गांव लौटने का होता। वे उसी समय शहर की ओर निकल पड़े। घर में कोई तो था नहीं कि बता कर जाते कि कहां जा रहे हैं। वह तो चौक पर कुछ लोगों ने उनको जाते हुए देख लिया नहीं तो कोई जान भी नहीं पाता कि वे कहां गये। कहां से आये। आगे की कथा का यही सूत्र बना कि वे सीतामढ़ी की ओर गये थे। दो दिनों तक उनको किसी ने नहीं देखा। दो दिनों बाद वे जिस अवस्था में दिखे उसके बारे में तो किसी ने कुछ सोचा भी नहीं था। बहरहाल, उन दो दिनों को लेकर भी कई कहानियां चलीं। लेकिन जो कहानी अधिक प्रचलित हुई इस कहानी में मैं भी उसी के माध्यम से उनके जीवन के उन दो गायब दिनों के सूत्र जोड़ूंगा।

सुनाने वाले ऐसे सुनाते जैसे सब कुछ उनकी नजरों के सामने घटित हुआ हो। उस रात जब वे मेनरोड स्थित अपने घर से निकल कर शहर की ओर गये तो कहते हैं सीधा साजन के ऑफिस गये जहां उसने ऊपर एक कमरा बनवा लिया था और उसी में रहने भी लगा था। उनका मन भरा हुआ था। पहले लोन वाली बात अब यह दवा वाली बात। उस दिन सब कुछ साफ साफ करने के इरादे से निकले थे। करीब घंटे भर की पैदल यात्रा के बाद जब वे उसके ऑफिस वाले स्थान पर पहुंचे तो वहां उन्होंने जो नजारा देखा उससे दंग रह गये। वहां चारों तरफ गांजे की गंध भरी हुई थी और उसके वैन से छोटे छोटे बोरे उतर रहे थे। जड़ीबूटियों के इतने बड़े जानकार से यह बात नहीं छिप पायी कि उन बोरों में क्या भरा था। वे सीधा साजन के पास पहुंचे और उससे सख्त आवाज में बात करने लगे। उससे उन्होंने साफ साफ कह दिया कि उसको गारंटर बना कर जो लोन उन्होंने लिया है उसको जल्दी से चुकाये नहीं तो वे उसका यह राज हाकिमों के सामने फाश कर देंगे। यही नहीं उस दिन उन्होंने उससे कड़क कर अपने नुस्खों पर विदेशी कम्पनी द्वारा बनायी जा रही दवाओं के बारे में भी पूछना शुरू कर दिया।

जवाब में साजन ने कुछ नहीं कहा। चुपचाप मुस्कराता सुनता रहा। कहता रहा, चाचा आइये इत्मीनान से बात करते हैं यहां स्टाफ लोग है। उसके बाद चाचा को लेकर वहां से चला गया। कहां गया उसने अपने चाचा के साथ क्या किया इसके बारे में किसी को कुछ पता नहीं। जब दो दिनों बाद उसी पाकड़ के पेड़ की ओर वाली सड़क से केवल लम्बा सफेद कुर्ता पहने गांव की ओर आते दिखायी दिये तो लोगों ने कहानी के सूत्र आगे सहज ही जोड़ लिए। लोग कहते जड़ीबूटी के इस पारंगत भगत को उनके उस मुंहबोले भतीजे ने उनके द्वारा ही लिखाये गये नुस्खे के अनुसार भांग में धतूरा मिला कर एक ऐसी जड़ी खिलायी जिसका दिमाग पर अचूक असर होता है। मात्रा ज्यादा हो तो दिमाग फिरने का शर्तिया अंदेशा रहता है। जब उसका असर पक्का हो गया तब रात में उसी पाकड़ के नीचे उनको छोड़ दिया। न किसी को पहचान रहे थे न किसी की बात का कोई जवाब दे रहे थे। जब भी कोई कुछ बोलता तो उसको जवाब में कोई दवाई बताने लगते। वह भी इस तरह जैसी किसी वैद्य ने किसी को कभी न बतायी हो।

काशी साव एक कहानी सुनाता कि एक दिन बिना धोती के लम्बा कुर्ता पहने जेबों में ढेला भरे चले जा रहे थे तो मैंने आवाज लगायी भगत जी चाय तो पीते जाइये। जवाब में वे बोले, शाम को नियमित तौर पर औषधि की तरह भांग का सेवन करने से पेट की कोई बीमारी नहीं होगी। न कब्ज की शिकायत होगी न पेट कभी खराब होगा। अच्छी नींद आयेगी सो अलग। किसी तरह का तनाव

भी नहीं होगा। मैं उनको देखता रह गया।

कारण जो भी रहा हो गांव में जब लोग जुटते तो यही कहते कि भगत जी की मति फिर गयी है। उनके ही कारनामों की चर्चा रहती। लम्बा कुर्ता पहने वे अचानक कहीं दिखायी दे जाते। उनको धोती या पाजामा पहनाने की जितनी भी कोशिश की जाती नाकामी ही हाथ लगती। यह सच है कि जब से वे गांव वापस आये थे कुर्ते के नीचे कोई भी वस्त्र पहनाये जाने के खिलाफ सत्याग्रह ठाने हुए थे। सच्चाई जो भी रही हो एक कहानी उनके इस तरह नंगधड़ंग रहने के कारण भी चल रही थी। कहानी का स्रोत जो भी रहा हो लेकिन लोग कभी अफसोस के साथ तो कभी चटखारे लेकर यह कहानी एक दूसरे को सुनाते। कहने वाले सुनाते कि जब साजन ने यह पक्का कर लिया कि भगत जी की स्मृति जाती रही तो उसने उनको आजाद करने से पहले एक और कारस्तानी की। उनके पायजामे के पांयचे में उसने बारीक मिर्च रगड़ दिया और फिर वही पायजामा उनको पहना दिया। उसके बाद उनकी क्या हालत हुई होगी आप समझ सकते हैं। वे दौड़ लगाने लगे जब उससे भी अंगविशेष की जलन शांत नहीं हुई तो पायजामा खोल कर दौड़ने लगे। उसी दौरान गांव वालों ने उनको देख लिया था। कहानी सच रही हो या झूठ उनको पायजामा पहनाने की कोशिश जब भी की जाती वे ऐसे विद्रोह कर देते कि लोगों को लगता हो न हो पायजामे में मिर्च लगाने वाली कहानी में कोई न कोई सचाई रही हो।

गांव में मर्यादा का संकट खड़ा न हो इसके लिए यह तय हुआ कि उनको घर में ही बंद करके रखा जाये। लेकिन सारी कोशिशें नाकाम हो जातीं। रात में वे उसी तरह प्रकृत अवस्था में घर से निकल कर सड़क पर आ जाते। गुजरती गाड़ियों पर ढेला चलाने लगते। कहने लगते इनमें तस्करी का माल है। देश के नौजवानों को बर्बाद करने का सामान है... कहते जाते और ढेला चलाने लगते। कई बार लोग देख लेते तो पकड़ कर ले आते। कई बार जब बाद में गाड़ी वाले किसी पत्थर फेंकने वाली आत्मा के किस्से सुनाते तो गांव वालों को समझते देर नहीं लगती कि वे किसकी कथा सुना रहे हैं। किसके बारे में बातें कर रहे हैं।

बाद में जब भगत जी के भक्तों ने उनकी कथा कहनी आरम्भ की तो कहने लगे कि पाकड़ के इस पेड़ के नीचे सबसे पहले ढेलमरवा गोंसाईं ने भगत जी जैसे पवित्र आत्मा को अपना स्वरूप दे दिया। उस दिन के बाद से अपनी जेब में वे ढेला लेकर चलते। केवल ठाकुर का कहना था कि ढेला तो वे कुत्तों और बच्चों को स्वयं से दूर रखने के लिए रखते थे जो उनको उस नंगधड़ंग अवस्था में देख कर उनके पीछे लग जाते। बच्चे पागल समझ कर उनके ऊपर पत्थर फेंकते और कुत्ते न जाने क्या समझ कर उनके पीछे पड़ जाते। ऐसे में जेबों में भरे ढेले ही उनके काम आते। जिसके चलाते ही कुत्ते और बच्चे दोनों भागते थे। उनके भक्तों ने बाद में जो कथा बनायी उसके अनुसार वे ढेला मार मार कर लोगों को आशीर्वाद देने लगे थे। तब हम जैसे सांसारिक उनकी माया को नहीं समझ पाये उनके दैवी रूप को समझ नहीं पाये...

खैर... उनको घर में बंद करके रखने की जितनी भी कोशिशें की गयीं सब नाकाम रहीं। न जाने कैसे वे रात को बाहर निकल आते और कहते हैं नेपाल की ओर जाने वाली सड़क पर देर रात चलने वाली गाड़ियों पर ढेला चलाने का अपना दैनिक कार्यक्रम शुरू कर देते। एक सुबह वहीं उनकी लहास मिली थी। दोनों जेब में ढेला भरा हुआ था जिससे उनकी बुरी तरह कुचली लाश को लोगों ने पहचाना था। देख कर लग रहा था सामान से भरे किसी ट्रक के नीचे आ गये हों।

...सब कहानियां पीछे छूटती जा रही हैं। अब तो बस जितवारपुर गांव है और ढेलमरवा गोसाईं की कहानी। ढेलमरवा गोसाईं की कहानी सड़क से गुजरने वाली गाड़ियों और उसके ड्राइवरों के माध्यम से सीमा के इस पार उस पार फैलने लगी। वहां मन्नत मांगने लोग दूर दूर से आने लगे। अनेक लोग कहते मिल जाते कि ढेलमरवा गोसाईं ने किस तरह उनकी मुराद पूरी कर दी।

tadbhav.com home page

तीन साल से वहां ढेलमरवा गोसाईं का मेला लगने लगा है पौष मास के शुक्ल पक्ष में एकादशी से मेला शुरू होता है जो पूर्णिमा के दिन नदी में स्नान के साथ समाप्त होता है। मेला बड़ा लोकप्रिय हो गया है। हजारों लोग मन्नतें मांगने आते हैं। मन्नत पूरी होने पर ढेले का चढ़ौना चढ़ाने आते हैं। जबसे लिच्छिवी टीवी ने अपने धार्मिक कार्यक्रम में ढेलमरवा गोसाईं के प्रकट होने की कहानी का बखान किया है तबसे भक्तों की भारी भीड़ यहां जुटने लगी है।

आपको कहानी में ऊपर आयी मंदिर की चर्चा का स्मरण आ रहा है तो उचित ही है। अब पटना के महावीर मंदिर जैसा भव्य मंदिर बनाना है तो धन इकट्ठा करने में समय तो लगता ही है न। गांव में हमारे आपके जैसे लोग जब मंदिर को लेकर सवाल उठाने लगे तो पिछले साल मेले में हजारों की भीड़ के सामने लक्ष्मेश्वर सिंह ने एलान किया कि आप लोग धीरज रखिये जल्दी ही मंदिर निर्माण का काम शुरू हो जायेगा। वे चाहते हैं कि मंदिर निर्माण का काम एक बार आरम्भ हो तो फिर रुके नहीं इसीलिए थोड़ा समय लग रहा है। आशा करनी चाहिए कि मंदिर निर्माण का काम जल्दी ही शुरू हो जायेगा।

आप सोच रहे होंगे कि साजन सिंह जैसा जुनरबी इस कहानी से गायब होकर कहां चला गया तो मैं आपसे माफी मांग लूं यह बताना भूल जाने के लिए कि मेला का संयोजक साजन सिंह को ही बनाया गया और जिस तरह सफलतापूर्वक ढेलमरवा गोसाईं का मेला लगातार तीसरे साल आयोजित हुआ उससे उसका रुतबा भी काफी बढ़ गया है। भगवान भरोसे चलने वाली एक राष्ट्रीय पार्टी का जिला महामंत्री बन गया है और जिस तरह से पिछले साल मेले का उद्घाटन उसने पार्टी के राष्ट्रीय महासचिव से करवाया है लोग कहने लगे हैं अगले चुनाव में विधानसभा का टिकट मिलना तो तय ही समझिए। लोग कहते हैं ढेलमरवा गोसाईं ने गांव की किस्मत ही नहीं बदली उसकी तकदीर भी बदल दी।

कुछ पूछिए तो हाथ ऊपर उठा कर बड़ी अदा से कहेगा सब ढेलमरवा गोसाईं की महिमा है।